के.हि.सं. गवेषणा, अनुप्रयुक्त भाषाविज्ञान, भाषा शिक्षण तथा साहित्य-चिंतन की शोध-पत्रिका

अंक-119, पौष-फाल्गुन, 2076/जनवरी-मार्च, 2020

© सचिव, केंद्रीय हिंदी शिक्षण मंडल, आगरा

प्रकाशक : विभागाध्यक्ष, अनुसंधान एवं भाषा विकास विभाग,
केंद्रीय हिंदी संस्थान, आगरा

संपादकीय कार्यालय : अनुसंधान एवं भाषा विकास विभाग, केंद्रीय हिंदी संस्थान,
हिंदी संस्थान मार्ग, आगरा - 282005
फोन/फैक्स 0562-2530684
ई-मेल : gaveshnapatrika@gmail.com

सदस्यता शुल्क : व्यक्तिगत प्रति अंक रु. 40.00
वार्षिक रु. 250.00 (डाक खर्च सहित)
संस्थागत वार्षिक रु. 350.00 (डाक खर्च सहित)
विदेशों में प्रति अंक $ 10.00
वार्षिक $ 40.00

मुद्रक : राष्ट्रभाषा ऑफसेट प्रेस, आगरा

'गवेषणा' में प्रकाशित सामग्री से संपादक मंडल या संस्थान की सहमति होना अनिवार्य नहीं है। प्रकाशित सामग्री के उपयोग के लिए स्वामी/प्रकाशक की अनुमति आवश्यक है।

स्वामित्व : सचिव, केंद्रीय हिंदी शिक्षण मंडल, आगरा

अनुक्रम

प्रधान संपादक की कलम से...

भलि मरवणरी बात/ **प्रो. नन्द किशोर पाण्डेय** 5-10

संपादकीय/ **डॉ. ज्योत्स्ना रघुवंशी** 11

विरासत

आस्वादधर्मी आलोचक डॉ. आनंद प्रकाश दीक्षित — **मनोज पाण्डेय** 12-20

हिंदी आलोचना की संस्कृति और आचार्य रामचंद्र शुक्ल — **रवि रंजन** 21-32

डॉ. उदयनारायण तिवारी का भाषा विज्ञान को योगदान — **दानबहादुर सिंह** 33-38

मीमांसा

दशम ग्रंथ में संस्कृति बोध — **हरीश अरोड़ा** 39-57

भक्तिकालीन साहित्य का सामाजिक संदर्भ — **आभा गुप्ता ठाकुर** 58-67

जातिगत संघर्ष से भारतीय राज्यों के पतन का ऐतिहासिक प्रत्याख्यान : गढ़ कुंडार — **श्याम नन्दन** 68-73

मानस का चित्रकूट प्रसंग : एक विराट सांस्कृतिक बिंब — **शीताभ शर्मा** 74-81

साहित्य की आत्म-सत्ता — **सर्वेश कुमार सिंह** 82-94

साहित्य

अज्ञेय के काव्य में अलंकार धर्मिता — **प्रभात कुमार प्रभाकर** 95-105

लीलाधर जगूड़ी के काव्य का व्यंग्यात्मक सत्य — **दीपशिखा** 106-116

स्त्री महत्वाकांक्षा और उसका शोषण : 'मैं और मैं' के परिप्रेक्ष्य में — **मुकेश कुमार त्रिपाठी** 117-124

संस्कृतियों के मध्य संवाद का सशक्त माध्यम : हिंदी का यात्रा साहित्य — **नवीन नन्दवाना** 125-137

हिंदी उपन्यासों के आइने में थर्डजेंडर — **प्रियंका कुमारी गर्ग** 138-147

नये प्रतिमानों के निर्माण और सामाजिक हस्तक्षेप की कविता (केदारनाथ सिंह की कविताएँ) — **अनुशब्द** 148-154

विस्थापन की समस्या और हिंदी साहित्य — **प्रशान्त कुमार सिंह** 155-162

विविध

शिकस्त पर फतह का परचम लहराते कृष्ण बलदेव वैद — **दत्ता कोल्हारे** 163-168

समकालीन समय की शिनाख्त करती कहानियाँ : 'सुरखाब के पंख' कहानी संग्रह के संदर्भ में — **भारती** 169-174

मैं कहता आँखिन देखी: प्रो. रजनीश कुमार शुक्ल — **अमित कुमार विश्वास** 175-187

इस अंक के लेखक

सदस्यता फार्म

प्रधान संपादक की कलम से...

भलि मरवणरी बात

'ढोला मारू रा दूहा' हिंदी की प्राचीन प्रतिष्ठित और चर्चित प्रेमगाथा है। इसकी कथा बहुत पुरानी है। यह काव्यग्रंथ राजस्थान के दो छोरों को जोड़ता है। 'ढोला मारू रा दूहा' की कथा जितनी पुरानी है उससे भी पुराना 'ढोला' शब्द है। इस शब्द का प्रयोग हेमचंद्र के 'सिद्धहेम शब्दानुशासन' में मिलता है। वहाँ यह शब्द प्रेमी और पति के रूप में प्रयुक्त हुआ है। राजस्थानी लोकगीतों में 'ढोला' योद्धा, प्रेमी, नायक और पति के रूप में आया है। राजस्थानी में यह बहुत ही लोकप्रिय और मधुर शब्द है। 'ढोला मारू रा दूहा' का ढोला सहृदय और संवेदनशील पति है। इस काव्य के कारण भी शब्द ने गंभीर और संप्रेषणीय अर्थ को ग्रहण किया। पति, प्रेमिका तथा दांपत्य संबंधों को लेकर गाया जाने वाला शायद ही कोई गीत हो जिसमें ढोला नहीं आता हो। 'मारू' शब्द का अर्थ है 'मरू का'। यानी मरू प्रदेश का। शीर्षक में आया 'मारू' शब्द स्त्रीवाचक है। यहाँ इसका अर्थ है मरुप्रदेश में निवास करने वाली। राजस्थान में स्थानों के साथ स्त्री और पुरुषों का नाम जोड़कर बुलाने की परंपरा रही है। इस ग्रंथ की मालवणी मालवा की रहने वाली है। 'मारू' शब्द मारवाड़ में नायक के अर्थ में भी प्रयुक्त होता है। अनेक लोकगीतों तथा काव्य ग्रंथों में मारू का प्रयोग नायक के रूप में हुआ है। राजस्थानी में 'रा' का प्रयोग संज्ञा या सर्वनाम के साथ होता है। संबंध कारक के चिह्न के रूप में भी 'रा' का प्रयोग किया जाता है। यहाँ पर 'रा' संबंध कारक की विभक्ति के रूप में प्रयुक्त हुआ है। 'दूहा' अपभ्रंश का प्रचलित छंद है। इस छंद के लिए राजस्थानी की अलग-अलग बोलियों में कई शब्द मिलते हैं।

इस कृति के रचनाकार के नाम को लेकर मतैक्य नहीं है। हिंदी के अनेक प्रतिष्ठित विद्वानों ने इसे 'कल्लोल' कवि की रचना माना है। कुछ विद्वानों का मानना है कि यह 'कुशललाभ' की रचना है। राजस्थानी साहित्य और मध्यकाल पर काम करने वाले कुछ विद्वानों ने इसे 'हरराज' कृत कहा है। इस कृति की अनेक हस्तलिखित प्रतियाँ प्राप्त होती हैं। इसके रचनाकाल को लेकर भी

12. 'मैं और मैं' मृदुला गर्ग, राजकमल प्रकाशन, दरियागंज, नई दिल्ली संस्करण 2013, पृ. 200

13. मृदुला गर्ग का कथा साहित्य, डॉ. तारा अग्रवाल, विद्या प्रकाशन गुजैनी कानपुर, संस्करण द्वितीय-2011, पृ. 211

14. मृदुला गर्ग का कथा साहित्य : डॉ. तारा अग्रवाल, विद्या प्रकाशन गुजैनी कानपुर, संस्करण द्वितीय-2011, पृ. 215

15. मृदुला गर्ग, व्यक्तित्व और कृतित्व, डॉ. एस. दीप्ति, अमन प्रकाशन रामबाग, कानपुर-प्रथम संस्करण-2018, पृ. 147

संस्कृतियों के मध्य संवाद का सशक्त माध्यम : हिंदी का यात्रा साहित्य

नवीन नन्दवाना

भारत देश विविधताओं वाला देश है। यहाँ की ऋतुएँ, मौसम, भूगोल, प्राकृतिक परिवेश, तीज-त्योहार, संस्कृति सभी कुछ नवीनता लिए हैं। अत: एक स्थान के निवासी को दूसरा स्थान अपनी यात्रा के लिए आकृष्ट करता है। वह स्थान यात्राओं के लिए निमंत्रण देता है। यदि बात केवल देश की न कि संपूर्ण विश्व की हो तो यह प्रकृति, पर्यावरण और परिवेश और भी विविधता और विशिष्टता से युक्त द्रष्टव्य होता है। अत: यात्राओं का मोह मनुष्य के हृदय में सदैव ही रहा है। 'घुमक्कड़शास्त्र' नामक ग्रंथ में राहुल सांकृत्यायन ने 'घुमक्कड़ी' को सबसे बड़ा धर्म माना है। वे लिखते हैं– "मेरी समझ में दुनिया की सबसे बड़ी वस्तु है, घुमक्कड़ी। घुमक्कड़ी से बढ़कर और कोई शक्ति समाज के लिए हितकारी नहीं हो सकती। मनुष्य स्थावर वृक्ष नहीं है, वह जगत का प्राणी है; चलना मनुष्य का धर्म है, जिसने इसे छोड़ा वह मनुष्य कहलाने का अधिकारी नहीं है। वस्तुत: मनुष्य जाति का इतिहास उसकी यायावर वृत्ति से संबद्ध है। यह मानव की मूल प्रवृत्ति है।"[1]

आज के यात्रा साहित्य पर विचार करते हुए असगर वजाहत लिखते हैं कि– "आज के यात्रा संस्मरण लेखक से आशा की जाती है कि वह किसी समाज, घटना, व्यक्ति के बारे में ऐसी जानकारियाँ देगा जो इंटरनेट पर उपलब्ध नहीं है। यह सरल काम नहीं है। आज पर्यटन या यात्रा केवल शहरों, इमारतों को देखने का नाम नहीं है। आज लेखक को नए समाज के उन कोनों को, उन छुपे हुए संबंधों को, संचालित करने वाली अंतरधाराओं को देखना और समझना पड़ेगा जो यात्रा-वृत्तांत को नया और रोचक बनाती है।"[2] यदि हम 21वीं सदी के हिंदी यात्रा साहित्य की बात करें तो पाते हैं कि– "सन् 2000 के बाद भारतीय परिवेश में लिखे यात्रा-ग्रंथों में महत्वपूर्ण कृतियाँ हैं– अरावली की गोद में (बालसहाय गौतम), और यात्राएँ (गोविन्द मिश्र), ब्रह्मपुत्र के किनारे-किनारे (सांवरमल सांगानेरिया), सूटकेस में जिंदगी (हेमंत द्विवेदी), कितना अकेला आकाश (नरेश मेहता), कुमायूँ यात्रा, हिमालय यात्रा (कृष्णनाथ), मुअनजोदड़ो (ओम थानवी)।"[3]

इसी प्रकार नई सदी में विदेशी यात्राओं को आधार बनाकर भी बहुत कुछ लिखा गया है। इनमें 'मेरी यात्राएँ सागर के पार'- राजेन्द्र जोशी (2004), 'रहस्यों के घेरे में अंटार्कटिका'- पृथ्वीनाथ पांडेय (2005), 'पश्चिमी जर्मनी पर उड़ती नजर'- मनोहर श्याम जोशी (2006), 'रोमानिया यात्रा की डायरी'- सियाराम तिवारी (2009), 'रोचक और रोमांचक अंटार्कटिका'- अरुणा (2005) आदि 2000 के बाद की विदेशी परिवेश को दर्शाने वाली उल्लेखनीय यात्रा-कृतियाँ हैं।"[4]

21वीं सदी के ही दौर में ही डॉ. सुमित्रा शर्मा का 'संस्कृति प्रवाह दर प्रवाह' (2002), नरेश मेहता का 'कितना अकेला आकाश' (2003), विश्वनाथ प्रसाद तिवारी ने 'अंतहीन आकाश' (2005), जयनारायण कौशिक का 'राइन नदी से सिंधु तक' (2005), महेश कटारे का 'पहियों पर दिन रात' (2005), कीर्ति केसर का 'प्रवास का प्रसंग' (2006), माला वर्मा का 'पिरामिडों के देश में' (2006), मनोहर श्याम जोशी का 'क्या हाल हैं चीन के' (2006), राकेश पाठक का 'काली चिड़ियों के देश में' (2006), डॉ उर्मिला जैन का 'देश-देश में गाँव-गाँव में' (2007), कृष्णदत्त पालीवाल का 'जापान में कुछ दिन' (2007), रमणिका गुप्ता का 'लहरों की लय' (2008), वीरेंद्र कुमार का 'कैलाश मानसरोवर यात्रा' (2009) रश्मि झा का 'चीन के दिन' (2009), गोविन्द मिश्र का 'रंगों की गंध' (2010), महेश दर्पण का 'पुश्किन के देश में' (2010), रामशरण जोशी का 'अपनों के पास, अपनों से दूर', (2010), आलोक मेहता का 'सफर सुहाना दुनिया का' (2010), विनोद बब्बर का 'इब्सन के देश में' (2011), अशोक जैरथ का 'अनाम यात्राएँ' (2011), असग़र वजाहत का 'रास्ते की तलाश में' (2012), डॉ. जवाहर धीर का 'मेरी विदेश यात्रा ऑस्ट्रेलिया' (2012), पंकज बिष्ट का 'ख़रामा-ख़रामा' (2012), प्रो. फूलचंद मानव का 'मोहाली से मेलबर्न' (2012), डॉ रमेश पोखरियाल निशंक का 'मॉरीशस की स्वर्णिम स्मृतियाँ' (2012), हरिराम मीणा का 'साइबर सिटी से नंगे आदिवासियों तक' (2012), अनिल यादव का 'वह भी कोई देस है महाराज' (2012), डॉ. महेश दिवाकर का 'अनुशासन के देश में' (2014) और अमृतलाल वेगड़ का 'नर्मदा तुम कितनी सुंदर हो' (2015), असग़र वजाहत का 'दो कदम पीछे भी' (2017) भी इस दिशा की महत्वपूर्ण कृतियाँ हैं। इन सभी यात्रावृत्तों में भारतीय और विदेशी परिवेश उभर कर आया है। वहाँ की सभ्यता और संस्कृति भी इन रचनाओं के माध्यम से समझ सकते हैं।

'संस्कृति प्रवाह दर प्रवाह' (2002) में लेखिका डॉ. सुमित्रा शर्मा ने देश के साथ-साथ विदेशी संस्कृति को भी अपने लेखन का केंद्र बनाया। इस संग्रह में उन्होंने मॉरीशस, नेपाल, बाली, थाईलैंड और सिंगापुर यात्राओं के वर्णन किए। इस पुस्तक में श्रीनगर शहर और अमरनाथ यात्रा के भी मोहक वर्णन किए हैं। यहाँ भारत के प्रमुख तीर्थ स्थलों केदारनाथ, बद्रीनाथ, गंगोत्री और यमुनोत्री के भी वर्णन मिलते हैं।

हरियाणा के साहित्य जगत में डॉ. जयनारायण कौशिक का नाम बड़े सम्मान के साथ लिया जाता है। हरियाणा साहित्य अकादमी के निदेशक रह चुके कौशिक जी की लगभग 80 पुस्तकें प्रकाशित हो चुकी हैं। 'राइन नदी से सिंधु नदी तक' तथा 'एक पंथ दो काज' नामक पुस्तकों पर इन्हें राहुल सांकृत्यायन पुरस्कार प्रदान किया जा चुका है। इनकी पुस्तक 'मेरी कैलाश मानसरोवर यात्रा' पर भी भारतीय साहित्य परिषद ने पुरस्कृत किया है। 'राइन नदी से सिंधु नदी तक' (2005) नामक यात्रावृत्त में लेखक जयनारायण कौशिक की राइन नदी (यूरोप) से सिंधु नदी (भारत) तक की यात्राओं के वर्णन हैं। लेखक ने ताशकंद होते हुए लंदन यात्रा की, इसी का वर्णन हमें यहाँ मिलता है। उज़बेकिस्तान की राजधानी ताशकंद है जो कि भारत-पाक के बीच शांति समझौते के लिए प्रसिद्ध है। अत: इसका इतिहास भी लेखक ने पुस्तक में अभिव्यक्त किया है। इसमें आपने जर्मनी, ऑस्ट्रिया, इटली, स्विटजरलैंड, ताशकंद, लंदन और बेल्जियम आदि देशों की यात्राओं के विषय में लिखा है। इस विषय में डॉ. विद्यानिवास मिश्र लिखते हैं कि– "राइन नदी से सिंधु तक पुस्तक पठनीय यात्रा विवरण है। यह वस्तुपरक और आत्मपरक दोनों हैं। इसमें परिवेक्षण शक्ति का परिचय तो मिलता ही है, एक भारतीय हृदय का भी परिचय मिलता है।"[5]

उत्तराखंड की चारधाम यात्रा के साथ-साथ रामेश्वरम और द्वारिका यात्रा को महेश कटारे ने अपनी पुस्तक 'पहियों पर दिन रात' (2005) में वर्णित किया है। यहाँ गंगोत्री, यमुनोत्री और ऋषिकेश यात्रा वर्णन के साथ-साथ सिख धर्म के धार्मिक स्थल हेमकुंड साहिब की यात्रा का भी वर्णन है। बद्रीनाथ की मूर्ति और प्राकृतिक परिवेश का भी सुंदर वर्णन यहाँ द्रष्टव्य है। यहाँ उत्तर प्रदेश के बनारस, अयोध्या, गोरखपुर और नेपाल (पशुपतिनाथ) यात्रा के भी वर्णन हैं। इस प्रकार यह संग्रह देश के प्रमुख तीर्थ स्थलों के साथ-साथ पड़ोसी राष्ट्रों के प्रमुख तीर्थ स्थलों की हमें घर बैठे यात्रा करवा देता है।

'क्या हाल है चीन के' (2006) नामक यात्रावृत्त के सहारे मनोहर श्याम जोशी ने तत्कालीन चीन के यथार्थ के उद्घाटन का प्रयास किया है। इसमें लेखक ने समाजवादी व्यवस्था की भी पड़ताल की है। चीन की उद्यान विद्या के विषय में वे लिखते हैं कि– "कमल सरोवर, बंसवट, फूलों से लदी टेकड़ी, रंग-बिरंगी मछलियों वाली तलैया, चट्टानों पर उगे टेढ़े-मेढ़े पेड़, झाड़ियों के बीच एकांत स्थल, फूलदार वृक्षों के मध्य हवा-घर और ऐसी ही तमाम और चीजों को बहुत जतन से जोड़-जाड़कर, सर्वथा कृत्रिम होते हुए भी नितांत प्राकृतिक लगने वाले उद्यान बनाने में चीनी प्रतिभा बेजोड़ रही है।"[6] इस प्रकार रचनाकार ने चीन की यात्रा को अपने साहित्यिक अंदाज में बखूबी प्रस्तुत किया है।

'काली चिड़ियों के देश में' (2006) नामक यात्रावृत्त के माध्यम से राकेश पाठक ने कोसोवो (लैंड ऑफ बर्ड्स) के राष्ट्रीय पक्षी इन काली चिड़ियों का स्मरण करते हुए यहाँ की

राजनीति और इतिहास पर भी दृष्टि डाली है। भारत, नेपाल, पाकिस्तान और बांग्लादेश द्वारा यहाँ शांति स्थापना के लिए प्रयास किए गए, इस बात पर भी लेखक का ध्यान गया है। रिपोर्टिंग के निमित्त की गई यात्रा को ही राकेश पाठक ने यहाँ वर्णित किया है। वर्ष 2006 में ही माला वर्मा द्वारा रचित यात्रावृत्त 'पिरामिडों के देश में' प्रकाशित हुआ। जिसमें रचनाकार ने इतिहास और मिथक के सहारे अपनी बात को कहने का प्रयास किया। पिरामिडों व उनमें रखी जाने वाली कीमती वस्तुओं और लुटेरों द्वारा उन खजानों को लूटने की बातों को भी रचनाकार ने वर्णित किया है। डॉ. उर्मिला जैन ने यूरोप व अफ्रीका महाद्वीप में की गई यात्राओं की स्मृतियों को 'देश-देश में गाँव-गाँव में' (2007) शीर्षक से संजोया है। यहाँ के देशों की सामाजिक व्यवस्था के साथ-साथ सभ्यता और संस्कृति के प्रभावी वर्णन लेखिका ने अपनी पुस्तक में दिए हैं। लेखिका ने ब्रिटेन यात्रा में शेक्सपियर के गाँव, स्त्री स्वतंत्रता, आयरलैंड की प्रकृति, फ्रांस में नारीवादी लेखिका सिमोन द बोउवा के नाम पर बना पुल तथा अफ्रीका की पशुपालक नसाई जाति का भी वर्णन किया है।

भारत के विभिन्न स्थलों की यात्रा वर्णनों के साथ-साथ अपने द्वारा की गई 34 देशों की यात्राओं को प्रसिद्ध पत्रकार आलोक मेहता ने 'सफर सुहाना दुनिया का' (2007) नाम से कलमबद्ध किया है। कृष्णदत्त पालीवाल द्वारा अपनी जापान यात्रा के विषय में लिखा गया यात्रावृत्त 'जापान में कुछ दिन' (2007) शीर्षक से प्रकाशित हुआ। यहाँ रचनाकार ने जापान के जीवन व वैशिष्ट्य को बारीकी के साथ दर्शाया है। जापान की प्रकृतिपूजक संस्कृति के विषय में कृष्णदत्त पालीवाल लिखते हैं कि– "शिंतो उपासक आठ सौ देवी-देवताओं में विश्वास रखते हैं और ये सभी देवी-देवता हवा, पानी, पहाड़, वृक्ष, सूर्य, चंद्र, आकाश सब प्रकृति की शक्तियाँ हैं। मानव यदि प्रकृति का स्वामी बनकर उसे रौंदेगा, तो प्रकृति विद्रोह करेगी।" पुस्तक की भूमिका में 'आत्मस्वीकार' शीर्षक से कृष्णदत्त पालीवाल लिखते हैं कि– "तोक्यो यूनिवर्सिटी ऑफ फॉरेन स्टडीज, जापान में विजिटिंग प्रोफेसर होकर गया। यहीं तरह-तरह के नवीन जीवनानुभव। विकसित देश में उत्तर-आधुनिक समाज की दमक। काफी समय के बाद मन की उथल-पुथल को शांत करने के लिए 'डायरी' लिखना शुरू किया। इस 'डायरी' में यात्रावृत्त, संस्मरण, रिपोर्ताज-सब कुछ रिल-मिल गया। विधा का बंधन अपने आप टूट गया। यहाँ कई विधाओं की मिलावट के कारण मेरी अंत:प्रक्रियाएँ अनेक आत्मबिंबों में उभरती मिलेंगी। इस अंतर्यात्रा के आप सहचर बनें, इस भरोसे के साथ 'जापान में कुछ दिन' आपको सौंप रहा हूँ।"[8]

'लहरों की लय' (2008) रमणिका गुप्ता द्वारा रचित यात्रा वृत्तांत है। इसके माध्यम से रचनाकार ने अमेरिका के जीवन, परिवेश और संस्कृति को अभिव्यक्त किया है। पुस्तक की भूमिका में रमणिका गुप्ता यात्राओं की महत्ता पर विचार करते हुए स्त्री और पुरुष को आधार बनाकर यात्राओं के विषय में लिंग आधारित भेद व समस्याओं को भी रेखांकित करती हैं। वे लिखती हैं कि– "स्त्री के

लिए यात्राओं का मतलब वही नहीं होता जो किसी पुरुष के लिए होता है। स्त्री के लिए घर यथास्थितिवाद का प्रतीक है और जब वह घर की दहलीज लाँघती है तो मुक्ति की दिशा में उसकी वह पहली यात्रा होती है। यात्राएँ स्त्री को यथास्थितिवाद की रूढ़ि से बाहर निकालती हैं, जीवन में बेहतरी की उम्मीद जगाती हैं, यह मैंने अपने अनुभव से जाना है।"[9] अपनी इस रचना में लेखिका ने अमेरिका के जीवन को बहुत निकट से देखा और उसे पूरी संवेदना के साथ अभिव्यक्त किया है। इस रचना में अमेरिका के विविध दृश्यों का वर्णन देख सकते हैं। विशाल नियाग्रा फॉल और वहाँ के दृश्यों के वर्णन के साथ-साथ रचनाकार ने शोषक व शोषितों से जुड़े विचारों को अभिव्यक्ति देते हुए अपने रचनाकार होने के धर्म का भी निवर्हन किया है– "ये आपको कोकाकोला पिलाएँगे- पानी पीने नहीं देंगे। यह अमेरिकनों का काला खून है, जिसे ये लोग हमें पिलाते हैं- जो हमें मारता है-हमें खरीदता और हमारा पानी हमसे छीन लेता है।"[10]

वीरेंद्र कुमार ने 'मानसरोवर यात्रा' के अपने अनुभव को 'कैलाश मानसरोवर यात्रा' (2009) नाम से लिपिबद्ध किया है। धार्मिक यात्रा होने के साथ-साथ यहाँ की प्रकृति व परिवेश, हिमालय के सुंदर प्राकृतिक दृश्यों का मनोरम वर्णन मिलता है। रास्ते, सड़क और साथी यात्रियों के वर्णन के साथ-साथ विविध घटनाओं का स्मरण करते हुए लेखक आगे बढ़ता चला है। लेखक ने यहाँ विविध स्थानों की यात्राओं के साथ-साथ लोक विश्वास व मान्यताओं को भी अभिव्यक्त किया है। रश्मि झा ने अपनी पुस्तक 'चीन के दिन' (2009) में पर्यटन के साथ-साथ वहाँ के इतिहास, संस्कृति और समसामयिक परिस्थितियों को भी अपने ध्यान में रखकर लेखन किया है। धर्म, अर्थ, समाज और शिक्षा आदि के वर्णन के साथ-साथ सीमाओं के संघर्ष को भी अपनी कलम के माध्यम से अभिव्यक्त किया है। इन्होंने 1022 दिनों की चीन यात्रा के वर्णन में चीन से जुड़े विविध विषयों पर अपनी कलम चलाई है।

'रंगों की गंध' नामक संग्रह में हिंदी के चर्चित रचनाकार गोविंद मिश्र ने अपने द्वारा 1980 से 2008 के बीच की गई यात्राओं के अनुभव को शब्द प्रदान किए हैं। इस पुस्तक में बस्तर के आदिवासी जीवन, इसके बाद अंडमान निकोबार यात्रा, राजस्थान के चित्तौड़ यात्रा के साथ-साथ नैनीताल, कौसानी, बद्रीनाथ, केदारनाथ, गंगोत्री और तिरुवंतपुरम आदि के यात्रानुभवों के वैशिष्ट्य को वर्णित करने के साथ-साथ पूर्वोत्तर भारत असम, अरुणाचल प्रदेश और मणिपुर आदि प्रदेशों के जनजीवन, संस्कृति और यात्रानुभवों का भी वर्णन किया है। इस ग्रंथ में इंद्रधनुषों के देश मॉरीशस और त्रिनिडाड का वर्णन करने में लेखक सफल रहा है। अपने इस यात्रावृत्त के माध्यम से लेखक ने पाठकों को देश के साथ-साथ विदेशों की भी मानस यात्रा करवाई है। यात्राओं के विषय में वे लिखते हैं कि– "यात्रा जीवन के दूसरे अनुभवों से थोड़े अलग किस्म का अनुभव है। जहाँ दूसरे अनुभव हमें साफ-साफ जोड़ते-तोड़ते हैं, अपनी अंतरंगता में चरमरा डालते हैं या फिर सूखा-सूखा और दूर-दूर रखते हैं कि वहाँ यात्रा दूरी रखते हुए भी पास लाती है, हम अपने खोल से बाहर निकलकर संसार की

व्यापकता को छूते होते हैं। व्यापकता की यह छाँह दुखी व्यक्ति को टूटने से बचाती है। स्वयं से थोड़ा वैराग्य और बाहर से जुड़ना दोनों एक साथ होता चलता है। मेरे लिए जो इससे बड़ी बात है, वह यह कि यात्रा में हम चलते हैं, हर हाल में चलते रहना-यह मेरी जिद दृढ़तर करती है यात्रा।"[11] सोवियत संघ के विघटन के बाद अपनी रूस यात्रा वर्णनों को रचनाकार व पत्रकार महेश दर्पण ने 'पुश्किन के देश में' (2010) नाम से वर्णित किया है। मास्को शहर वहाँ के जनजीवन, वैभव और जीवन शैली आदि का सूक्ष्म अंकन हम यहाँ देख सकते हैं।

"महेश दर्पण ने रूस की अत्यंत समृद्ध साहित्यिक और सांस्कृतिक विरासत का गहराई से विवेचन किया है। रूस के महान लेखकों मार्क्स, लेनिन, चेखव, पुश्किन, टॉल्स्टाय, गोगोल, गोर्की सहित अन्य लेखकों की याद में बनाए गए संग्रहालयों का लेखक ने सजीव चित्रण किया है, जिनकी स्मृतियों को रूस ने करीने से संजोकर रखा है। हर रचनाकार के बारे में पढ़ते हुए ऐसा लगता है, जैसे लेखक ने उसके संग्रहालय को खुद हमारे सामने लाकर रख दिया है। पूरे संस्करण में सहज और सरल भाषा की प्रवाहमयता बरकरार है और हम कहीं भी बोझिल महसूस नहीं करते। ....अपने यात्रा वृत्तांत में महेश दर्पण ने रूस के सफेद स्याह दोनों पक्षों को ईमानदारी के साथ प्रस्तुत किया है। एक तरफ वहाँ की सांस्कृतिक विरासत, वहाँ के लोगों के खिलंदड़ेपन आत्मीय और भारत प्रेमी होने की खुलकर सराहना की है, तो दूसरी तरफ वहाँ के निरंकुश प्रशासन और क्षीण होती जा रही सामाजिक सांस्कृतिक व्यवस्था की जमकर आलोचना भी की है। यह किताब रूस के उन महान लेखकों और उनके जीवन संघर्षों से हमारा परिचय कराती है। जिन्होंने दुनिया को अपना सर्वश्रेष्ठ दिया। उनके जीवन से जुड़ी अनेक चीजों और घटनाओं को लेखक ने रोचकता के साथ प्रस्तुत किया है। रूस के चित्रकारों, कलाकारों तथा आम जनजीवन के संघर्षों, उनकी निष्ठा और प्रेम की अनुभूतियों को भी लेखक ने गहरे स्पर्श किया है।"[12]

'अपनों के पास, अपनों से दूर' (2010) नामक यात्रावृत के माध्यम से रामशरण जोशी ने अपने द्वारा 1987 से 1990 के बीच की गई पाकिस्तान, अफगानिस्तान, श्रीलंका, मॉरीशस, नामीबिया और चीन की यात्रा के अनुभव को शब्दबद्ध किया है। अपनी इन देशों की यात्राओं के माध्यम से रचनाकार ने यहाँ के जनजीवन, संस्कृति और परिवेश के साथ-साथ, खानपान, धर्म, राजनीति व मान्यताओं का भी सूक्ष्मांकन किया है। लेखक ने यह दर्शाने का प्रयास किया है कि अफगानिस्तान में भारतीय मूल के निवासी किस प्रकार वहाँ एक लघु भारत की संकल्पना उपस्थित करते हैं। गौतम और मऊ के देश में संस्मरण के जरिए लेखक ने चीन यात्रा के वर्णन किए हैं।

ओम थानवी का 'मुअनजोदड़ो' (2011) 21वीं सदी के यात्रा साहित्य में अपनी विशिष्ट पहचान रखता है। एक प्राचीन सभ्यता और वैशिष्ट्य को यह इस प्रकार अभिव्यक्ति देता है कि पाठक

इसे पढ़ते समय अपने को इस सभ्यता के बहुत ही निकट पाता है। पुस्तक के आवरण का पृष्ठ भाग कुछ इन्हीं भावों को दर्शाता है– "मुअनजोदड़ो की खूबी यह है कि इस आदिम शहर की सड़कों और गलियों में आप आज भी घूम-फिर सकते हैं। यहाँ की सभ्यता और संस्कृति का सामान चाहे अजायबघरों की शोभा बढ़ा रहा हो, शहर जहाँ था, अब भी वहीं है। आप इसकी किसी भी दीवार पर पीठ टिका कर सुस्ता सकते हैं, वह कोई खंडहर क्यों न हो, किसी घर की देहरी पर पाँव रखकर सहसा सहम जा सकते हैं, जैसे भीतर अब भी कोई रहता हो, रसोई की खिड़की पर खड़े होकर उसकी गंध महसूस कर सकते हैं। शहर के किसी सुनसान मार्ग पर कान देकर उस बैलगाड़ी की रुन-झुन भी सुन सकते हैं जिसे आपने पुरातत्व की तस्वीरों में मिट्टी के रंग में देखा है। यह सच है कि किसी आँगन की टूटी-फूटी सीढ़ियाँ अब आपको कहीं ले नहीं जातीं, वे आकाश की तरफ जाकर अधूरी ही रह जाती हैं। लेकिन उन अधूरे पायदानों पर खड़े होकर अनुभव किया जा सकता है कि आप दुनिया की छत पर खड़े हैं, वहाँ से आप इतिहास को नहीं, उसके पार झाँक रहे हैं।"[13]

इस पुस्तक के माध्यम से रचनाकार ने तत्कालीन समाज, संस्कृति के साथ-साथ लिपि को लेकर भी विस्तार से चर्चा की है। इतिहास के विषयों का सहारा लेते हुए भी यह पुस्तक अपने आप में इस बात में अनूठी है कि यह मात्र इतिहास का वर्णन नहीं है। साहित्यिकता की महक आद्योपांत महसूस कर सकते हैं। पुस्तक का लोकार्पण करते हुए हिंदी के विख्यात कवि कुंवर नारायण ने कहा है कि– "इस पुस्तक में यात्रा वृत्तांत की शैली को कई स्तरों पर संभाला गया है। भौगोलिक स्तर पर, ऐतिहासिक स्तर पर, सूचनाओं-जानकारियों के स्तर पर। साथ ही यह पुस्तक साहित्य और इतिहास के बीच एक संवाद भी है। हिंदी की यह पहली किताब है, जिसमें ट्रैवेलॉग को एक ही नैरेटिव में साधा गया है। ये इधर की किताबों में बिल्कुल फर्क तरह की किताब है।"[14]

वास्तव में यह 'सभ्यता की सुबह में इतिहास की सैर' कराने वाली पुस्तक है। इसी कारण इस शीर्षक का प्रयोग करते हुए विख्यात ब्लॉग 'जानकीपुल' में इस पुस्तक के विषय में हम यह अभिमत पढ़ सकते हैं कि– "बहरहाल, मुअनजोदड़ो के बहाने ओम थानवी सिंधु घाटी सभ्यता की कई अनसुलझी बहसों के अलग-अलग सिरे पकड़ते हैं। सिंधु घाटी के काल और समाज निर्धारण के अलावा इसकी अब तक गूढ़ बनी हुई लिपि पर भी उन्होंने विस्तार से चर्चा की है। लेकिन इतना सब कुछ होने के बाद भी 'मुअनजोदड़ो' इतिहास की किताब नहीं है। सिर्फ इसलिए नहीं कि यह एक बहुत छोटी-सी किताब है सिर्फ 118 पृष्ठों की, जो कई मसलों पर टिप्पणी करती है, बल्कि इसलिए भी कि यह इतिहास लिखने के लिए लिखी नहीं गई है। इतिहास इसमें उतना ही आया है जितना ओम थानवी ने अपनी यायावर जिज्ञासा शांत करने के लिए खंगाला है। हालाँकि यह फिर भी कम नहीं है। लेकिन मूलत: यह किताब इतिहास की गली में पहुँच भले जाती है, इसका मकसद कहीं ज्यादा बड़ी सैर कराना है। और यह सैर बिल्कुल शुरू से शुरू हो जाती है।"[15]

पुस्तक के फ्लैप पर इस पुस्तक के वैशिष्ट्य के विषय में जो लिखा गया है उससे भी हम पुस्तक की महत्ता का आकलन कर सकते हैं। पुस्तक के संदर्भ में मधुकर उपाध्याय का मत है कि– "यात्राएँ जैसी भी हों, उनका अर्थ नहीं बदलता। इसलिए कि हर यात्रा में एक अर्थ निहित है, जो उसका स्थायी भाव है कि किनारे नहीं जाना है। सूरते-हाल जो भी हो। वैसे भी पहुँचना कभी मकसद नहीं हो सकता। न यात्राओं का। न जिंदगी का। यात्राएँ तो होती ही हैं पहुँची हुई। अपने हर कदम पर उसी में सब हासिल-जमा। बशर्ते नजर ठीक हो और नजरिया भी। ओम थानवी के पास दोनों की कमी नहीं है। बल्कि इफरात है। नतीजतन, यात्रा के अलावा पढ़ाकू फुरसतों के साथ उन्होंने 'मुअनजोदड़ो' में अपने रंग भर दिए हैं। उनका यह नजरिया ही किताब का असली हासिल है। किसी देश या शहर के ऊपर से उड़ान भरते हुए उसके बारे में सब कुछ जान लेने वाले यात्रा वृत्तांतों से अलग, 'मुअनजोदड़ो' में नए क़रीने से चीजें देखने का सलीका है। गहराइयों में उतरता। टीलों की ऊँचाइयों तक ले जाता। वह आप पर कुछ लादता-थोपता नहीं। साथ चलता रहता है। बहैसियत एक ईमानदार दोस्त। 'मुअनजोदड़ो' की एक और ख़ास बात : वह यात्रा को रैखिक नहीं रहने देता। बल्कि कई बार एहसास दिलाता है कि आप किसी बहुमंजिला इमारत की लिफ्ट में हैं और हर मंजिल एक कथा है। हमारे पूर्वजों की अनवरत कथा, जो जारी है अनंतिम है।"[16] इसी वैशिष्ट्य के कारण ही वर्ष 2014 के के. के. बिड़ला फाउंडेशन के बिहारी पुरस्कार से यह रचना पुरस्कृत हुई।

सुप्रसिद्ध साप्ताहिक राष्ट्रीय पत्र 'राष्ट्र किंकर' के संपादक और भारतीय सांस्कृतिक चिंतन के संवाहक विनोद बब्बर ने अपने यात्रा अनुभव की पुस्तक 'इब्सन के देश में' (2011) शीर्षक से प्रकाशित कराई। इस पुस्तक में उन्होंने अपनी नार्वे देश की यात्राओं के माध्यम से वहाँ के इतिहास, संस्कृति और जनजीवन पर प्रकाश डाला है। नार्वे बगीचों और मूर्तियों के लिए भी जाना जाता है। प्रसिद्ध नाटककार इब्सन और साहित्यकार हॉलवर्ग की मूर्तियाँ भी लेखक के मानस पटल पर रही हैं। आपकी एक ओर पुस्तक 'इंद्रप्रस्थ से रोम' शीर्षक से प्रकाशित हुई है। पुस्तक की समीक्षा करते हुए डॉ. मिथिलेश लिखते हैं कि– "डॉ. बब्बर का लिखा 'इंद्रप्रस्थ से रोम' तक नामक यात्रा-संस्मरण एक सराहनीय प्रयास है, मेरी दृष्टि में इसे सिर्फ एक यात्रा-संस्मरण कहना इस कृति के साथ अन्याय होगा, बल्कि आज के समय में जब तमाम युवा अपनी मातृभूमि से पलायन कर जाते हैं और अपनी सामर्थ्य भारत के अतिरिक्त किसी अजनबी देश में लगाते हैं, तब एक हिंदुस्तानी की नजर से यूरोप दर्शन का वर्णन उनके हृदय में निश्चय ही मातृभूमि के प्रति प्रेम को अंकुरित करेगा और जिन हृदयों में यह प्रेम, अर्थ-युग में दब गया है, उस पर जमी धूल को हटाने का कार्य करेगा, ऐसा मैं इसलिए कह रहा हूँ क्योंकि पुस्तक के कुल 9 लेखों, जिनमें यूरोप के नौ प्रमुख शहरों, देशों का विभिन्न प्रकार से चित्रण किया गया है, उन सभी लेखों में लेखक ने भारतीयता का भावात्मक एहसास जोड़ने का सार्थक प्रयास किया है। लंदन, पेरिस, स्विट्जरलैंड, ऑस्ट्रिया, वेनिस, रोम, वेटिकन सिटी, पीसा, मिलान

जैसी यूरोपीय पहचानों का वर्णन करते हुए लेखक ने प्रत्येक लेख में, बल्कि मैं तो कहूँगा हर एक पन्ने में भारतीयता के एहसास को सजीव बनाने की पुरजोर कोशिश की है, नवशिला प्रकाशन, नागलोई, नई दिल्ली द्वारा प्रकाशित पुस्तक, उन दूसरे लेखकों के लिए करारा जवाब है, जो यूरोप इत्यादि देशों का वर्णन करते हुए भारत-भूमि के स्वाभिमान को दाँव पर लगाने से परहेज नहीं करते हैं, जबकि इस पुस्तक में आपको व्यक्ति, संस्कृति, स्थान इत्यादि अधिकांश चीजों में लेखक द्वारा भारतीय परिदृश्य में तुलना प्रस्तुत नजर आएगी, हाँ! लेखक ने साफगोई से कई जगहों पर उनको बेहतर बताया है तो कई जगहों पर हमारी संस्कृति इसी पुस्तक में बेहद उम्दा नजर आएगी।"[17]

अपनी यात्राओं के दौरान हिमालय की संस्कृति को बहुत नजदीक से देखने वाले शिक्षाविद एवं लेखक अशोक जैरथ ने अपने यात्रा अनुभव 'अनाम यात्राएँ' (2011) शीर्षक से प्रकाशित कराया। अपने अध्यापन से जुड़े सेवा काल में हुए स्थानांतरणों ने आपको नई-नई प्रकृति परिवेश और नए स्थलों की यात्रा के अवसर उपलब्ध कराए हैं। बहता पानी निर्मल वाले विचार में विश्वास करने वाले जैरथ ने जम्मू-कश्मीर, हिमाचल और उत्तरांचल की प्रकृति का मनोरम वर्णन किया है। उन्होंने कुमाऊं, गढ़वाल, पिथौरागढ़, अल्मोड़ा, चमोली और बद्रीनाथ की यात्रा कर अपने जीवन अनुभवों की पूँजी में वृद्धि की है।

हिंदी के सुप्रसिद्ध लेखक असग़र वजाहत के 2008 में 'चलते तो अच्छा था', 2011 में 'पाकिस्तान का मतलब क्या', 2012 में 'रास्ते की तलाश में' तथा 2017 में 'दो कदम पीछे भी' शोर्षक से यात्रा वृत्तांत प्रकाशित हुए। 'रास्ते की तलाश में' (2012) शीर्षक से यात्रावृत्त संग्रह की रचना की। यहाँ अंडमान-निकोबार और मिजोरम यात्रा वर्णनों के साथ-साथ आजरबाईजान के हिंदू मंदिरों की यात्रा के वर्णन भी हैं। उन्होंने स्मरण कराया है कि कैस्पियन सागर के किनारे बसे बाकू (आजरबाईजान देश की राजधानी) शहर को 'हवा का शहर' के नाम से भी जाना जाता है। इस मुस्लिम देश के हिंदू मंदिरों के वर्णन करने के साथ-साथ यहाँ के भूगोल, परिवेश और संस्कृति को भी अपने वर्णन का विषय बनाया है। 'रास्ते की तलाश में' कई अर्थों से पारंपरिक यात्रा-वृत्तांतों से भिन्न पुस्तक है। इस पुस्तक में विवरण के शब्द-चित्र ही नहीं बल्कि वास्तविक चित्र भी देखे जा सकते हैं। चित्रों की भाषा के व्यापक आयाम होते हैं। यही कारण है कि रास्ते की तलाश में यात्रा-वृत्तांत की भाषा को चित्र एक व्यापकता और समग्रता प्रदान करते हैं। हिंदी में ऐसे यात्रा-वृत्तांत कम हैं जो शब्दों को चित्रात्मक ही नहीं बनाते बल्कि चित्रों के माध्यम से एक जीवंत भाषा को संप्रेषित करते हैं।"[18]

डॉ. जवाहर धीर का यात्रा वृत्तांत 'मेरी विदेश यात्रा ऑस्ट्रेलिया' शीर्षक से वर्ष 2012 में प्रकाशित हुआ। इस वर्णन से सिडनी व मेलबर्न नामक शहरों के जीवन व संस्कृति के सहारे ऑस्ट्रेलिया का जीवन हमारी आँखों के सामने सजीव हो जाता है। गुजरात, राजस्थान और उत्तरांचल

आदि की अपनी यात्राओं को पंकज बिष्ट ने 'खरामा-ख़रामा' (2012) शीर्षक से लिखा। इसमें रचनाकार ने गुजरात के द्वारिका, राजस्थान के चित्तौड़ और त्रिपुरा की यात्रा का वर्णन किया है। राजस्थान के चित्तौड़गढ़ यात्रा के माध्यम से लेखक ने कृष्ण भक्त कवयित्री मीरा और उसके अवदान का भी स्मरण किया है। 'मोहाली से मेलबर्न' (2012) में लेखक प्रो. फूलचंद मानव ने अपनी यात्राओं का स्मरण करते हुए ऑस्ट्रेलिया के जीवन, वहाँ की संस्कृति, शिक्षा, पर्यावरण, भूगोल, स्वच्छता, देव स्थानों और प्राकृतिक सौंदर्य को अपने केंद्र में रखकर लेखन किया है। राजनीति में सक्रिय रहते हुए भी साहित्य से गहरा सरोकार रखने वाले रचनाकार डॉ. रमेश पोखरियाल निशंक ने 'मॉरीशस की स्वर्णिम स्मृतियाँ' (2012) नाम से अपने यात्रा वर्णनों का प्रकाशन कराया। अपने यात्रा संस्मरण के जरिए आपने मॉरीशस के सामाजिक जीवन और सांस्कृतिक वैभव को दर्शाने का प्रयास किया है।

आदिवासी विमर्श को केंद्र में रखकर लेखन करने वाले रचनाकार हरिराम मीणा ने 'धूणी तपे तीर' नामक उपन्यास के लिए बहुत ख्याति प्राप्त की। वहीं आपने 'साइबर सिटी से नंगे आदिवासियों तक' (2012) शीर्षक से यात्रावृत्त की भी रचना की। इस यात्रावृत्त के माध्यम से एक ओर भारत के चमचमाते शहरों जैसे हैदराबाद, विशाखापट्टनम, भुवनेश्वर, कोलकाता और चेन्नई आदि के वैभव व शहरी संस्कृति का वर्णन किया है, वहीं अंडमान-निकोबार द्वीप समूह के आदिवासियों, उनकी संस्कृति और उनके जीवन यथार्थ, वहाँ की जेल जो भारतीयों पर किए गए अत्याचारों की गवाह के रूप में आज भी मौजूद हैं, का भी वर्णन किया है। लेखक ने इन वर्णनों के माध्यम से आदिवासी जनजीवन और यथार्थ का उद्घाटन करने का प्रयास किया है।

'वह भी कोई देस है महाराज' (2012) नामक यात्रावृत्त की रचना पत्रकार और लेखक अनिल यादव द्वारा की गई। यह संग्रह पाठकों के समक्ष पूर्वोत्तर भारत की झाँकी प्रस्तुत करता है। यहाँ लेखक ने पूर्वोत्तर के सात राज्यों (असम, अरुणाचल प्रदेश, त्रिपुरा, नागालैंड, मणिपुर, मिजोरम और मेघालय) के राजनीतिक, सामाजिक और आर्थिक जीवन यथार्थ के उद्घाटन के साथ-साथ वहाँ के सांस्कृतिक वैभव का भी वर्णन किया है। 'वह भी कोई देस है महराज' हिंदी के यात्रा-संस्मरणों में अपने ढंग का पहला और अद्भुत वृत्तांत है। सामाजिक-सांस्कृतिक, राजनीतिक और आर्थिक मसलों पर लिखने वाले पत्रकार अनिल यादव का यह यात्रा वृत्तांत पूर्वोत्तर की जमीनी हकीकत तो बयान करता ही है, वहाँ के जन-जीवन का आँखों देखा हाल भी बयान करता है जो दूरबीनी दृष्टि वाले पत्रकार और इतिहासकार की नजर में नहीं आता। पेट्रोल-डीजल, गैस, कोयला, चाय देने वाले पूर्वोत्तर को हमारी सरकार बदले में वर्दीधारी फौजों की टुकड़ियाँ भेजती रही हैं। पूर्वोत्तर केंद्रित इस यात्रा पुस्तक में वहाँ के जन-जीवन की असलियत बयान करने के साथ-साथ व्यवस्था की असलियत को उजागर करने में भी अनिल ने कोई कोताही नहीं बरती है। इस यात्रा में उन्होंने छः महीने से ज्यादा समय दिया और उस अनुभव को लिखने में लगभग दस वर्ष लगाए। जाहिर है कि भावोच्छ्वास का

कोई झोल न हो और तथ्यजन्य त्रुटि भी न जाए इसका ख्याल रखा गया है।"[19] अपनी आसाम यात्रा का वर्णन करते हुए लेखक ने बताया है कि यहाँ के व्यापार पर मारवाड़ियों का आधिपत्य है। असमी मूल का व्यक्ति केवल उपभोक्ता है। कभी वह बंगाल के प्रभाव में रहा तो कभी बिहार के। लेखक ने मेघालय में हो रही घुसपैठ का भी वर्णन किया है। मिजोरम की बाँस-सुपारी की खेती, नागालैंड के नागा जनजातियों का यथार्थ और अरुणाचल के विकास और संस्कृति को भी लेखक ने सरस शैली में यथार्थ रूप से अभिव्यक्त किया है। डॉ. महेश दिवाकर का यात्रा साहित्य 'अनुशासन के देश में' नाम से प्रकाशित हुआ। इसमें सिंगापुर के वैभव और विकास से जुड़ी यादों का खजाना इस यात्रा साहित्य में देख सकते हैं। छोटे किंतु सुंदर और सुव्यवस्थित देश की कानून व्यवस्था का भी लेखक ने वर्णन किया है।

यात्रा साहित्य में अपनी विशेष पहचान बनाने वाले रचनाकार अमृतलाल वेगड़ ने हिंदी जगत को चार महत्वपूर्ण यात्रा साहित्य की कृतियाँ भेंट कीं। नर्मदा को केंद्र बनाकर आपने 'सौंदर्य की नदी नर्मदा', 'अमृतस्य नर्मदा' और 'तीरे-तीरे नर्मदा' और 'नर्मदा तुम कितनी सुंदर हो' (2015) लिखीं। आपकी रचनाओं का अनुवाद गुजराती, मराठी और अंग्रेजी भाषाओं में भी हो चुका है। 'सौंदर्य की नदी नर्मदा' को वर्ष 2004 में साहित्य अकादमी सम्मान से नवाजा जा चुका है। 'सौंदर्य की नदी नर्मदा' के 'ओंकारेश्वर से खलघाट' वर्णन में वे लिखते हैं कि– "नर्मदा तट के छोटे से छोटे तृण और छोटे से छोटे कण न जाने कितने परिव्राजकों, ऋषि मुनियों और साधु संतों की पदधूलि से पावन हुए होंगे। यहाँ के वनों में अनगिनत ऋषियों के आलय रहे होंगे। वहाँ उन्होंने धर्म पर विचार किया होगा, जीवन मूल्यों की खोज की होगी और संस्कृति का उजाला फैलाया होगा। हमारी संस्कृति आरण्यक संस्कृति रही। लेकिन अब? हमने उन पावन वनों को काट डाला है और पशु-पक्षियों को खदेड़ दिया है या मार डाला है।"[20] साहित्यकार मृणाल पांडे ने अपने लेख 'अमृतलाल वेगड.: चला गया एक नर्मदा प्रेमी-चितेरा' में लिखा कि– "नदियों, खासकर नर्मदा की बिगड़ती दशा से वे बहुत खिन्न थे। हम हत्यारे हैं, उन्होंने एक बार गुस्से से लिखा, अपनी ही नदियों के हत्यारे ....प्रकृति से कैसा विश्वासघात है यह! नर्मदा तट पर पेड़ों की कटाई ने भी उनको विचलित किया था। एक तो वैसे ही नर्मदा माता मर रही है, तिस पर उसके आसपास पेड़ों को काटना तो मरणशील को डबल निमोनिया देना है।"[21] अमृतलाल वेगड़ का मानना है कि यात्रा का आनंद इस बात में है कि बिना नक्शे या गाइड के निकल पड़ो। रास्ता तुम्हें खुद रास्ता बताएगा। उनका मत है कि यात्रा के कष्टों को भी हमें यात्रा के आनंद का ही हिस्सा मानना चाहिए। अपनी नर्मदा परिक्रमा का स्मरण करते हुए वे कहते हैं कि– "अपनी नर्मदा परिक्रमा के दौरान एक परकम्मावासी ने मुझसे कहा था कि परिक्रमा में जब तक पैर में काँटा न चुभे, तब तक मजा नहीं आता। काँटा-कष्ट भी परिक्रमा का हिस्सा है। एक और बाबा ने कहा था कि परिक्रमा तो चींटी की चाल से करनी चाहिए। प्रकृति के सौंदर्य का रसास्वादन करते हुए, पेड़-पौधों से आत्मीयता

स्थापित करते हुए, लोगों के साथ घरोपा स्थापित करते हुए, फेफड़ों में ताजा हवा भरते हुए और प्रकृति का हिस्सा बनते हुए करनी चाहिए।"[22]

आज के यात्रा साहित्य लेखन के संदर्भ अब बदले हैं। विषय चयन से लेकर शिल्प तक का अंदाज कुछ नया-सा है। "अब यात्रावृत्त का लेखक नेरेटर-भर नहीं है तथा किसी स्थान विशेष की भीड़भाड़, चकाचौंध अथवा प्राकृतिक सौंदर्य से भौंचक्का-सा नहीं हो जाता, अपितु वह उन सबकी तह में जाने का प्रयत्न करता है। वह यात्रावृत्तों के लेखन में प्रवृत्त होने के पूर्व उन सभी स्थितियों से जूझता है तथा गुजरता हुआ चलता है, जिनसे किसी कवि, कथाकार को गुजरना पड़ता है। यही कारण है कि अब यात्रावृत्तों की बनावट में पहले की अपेक्षा बहुत फर्क आ गया है। यह परिवर्तन कथ्य में ही नहीं, बल्कि अभिव्यक्ति की दिशा में भी आया है। अब लेखक ऐसे विश्लेषणों तथा उपमानों का प्रयोग नहीं करता, जो किसी भी देश के, किसी भी स्थान पर वर्णन करने के लिए प्रयुक्त किए जा सकते हैं। उसकी प्रवृत्ति ऐसे विशेषणों तथा बिंबों का प्रयोग करने की है, जो उसके अनुभव संसार को साकार कर सकें। आज वह यात्रा के दौरान हुई अपनी अनुभूतियों को इस प्रकार प्रस्तुत करने के लिए प्रयत्नशील है कि उसे एक सर्जनात्मक उपलब्धि के रूप में स्वीकारा जा सके।"[23]

संदर्भ

1. राहुल सांकृत्यायन, घुमक्कड़शास्त्र, राजकमल प्रकाशन, नई दिल्ली, 2004, पृ. 09।
2. असग़र वजाहत, कथा से इतर, कथेतर, सं. माधव हाड़ा, साहित्य अकादेमी, नई दिल्ली, 2017, पृ. 40।
3. डॉ. प्रमोद कोवप्रत, 21वीं सदी के यात्रा साहित्य में विदेशी परिवेश, समवेत, सं. डॉ. नवीन नंदवाना, वर्ष 01, अंक 01, जुलाई 2013, पृ. 37।
4. डॉ. प्रमोद कोवप्रत, 21वीं सदी के यात्रा साहित्य में विदेशी परिवेश, समवेत, सं. डॉ. नवीन नंदवाना, वर्ष 01, अंक 01, जुलाई 2013, पृ. 38।
5. जयनारायण कौशिक, राइन नदी से सिंधु तक, वरुण प्रकाशन, दिल्ली, 2005, फ्लैप से।
6. मनोहरश्याम जोशी, क्या हाल हैं चीन के, वाणी प्रकाशन, नई दिल्ली, 2006, पृ. 65।
7. कृष्णदत्त पालीवाल, जापान में कुछ दिन, किताबघर, नई दिल्ली, 2007, पृ. 12।
8. कृष्णदत्त पालीवाल, जापान में कुछ दिन, किताबघर, नई दिल्ली, 2007, आत्मस्वीकार से।
9. रमणिका गुप्ता, लहरों की लय, नेहा प्रकाशन, दिल्ली, 2008, पृ. 01।
10. रमणिका गुप्ता, लहरों की लय, नेहा प्रकाशन, दिल्ली, 2008, पृ. 25।
11. https://kgpbooks.com/1/12/507/rangon~ki~gandh~2-prd.html
12. http://hindi.webdunia.com/article/hindi-books-review/
13. ओम थानवी, मुअनजोदड़ो, वाणी प्रकाशन, नई दिल्ली, 2011, आवरण पृष्ठ का अंतिम पृ.।
14. https://kankad.wordpress.com/2011/04/11/muanjodro/
15. https://www.jankipul.com/2011/04/blog-post_13-8.html 4 nov 2018
16. ओम थानवी, मुअनजोदड़ो, वाणी प्रकाशन, नई दिल्ली, 2011, बाएँ फ्लैप से।
17. https://shabd.in/post/8977/pustak-hindustani-najar-europ-darshan
18. http://www.antikaprakashan.com/p/blog-page_5.html
19. अनिल यादव, वह भी कोई देश है महाराज, अंतिका प्रकाशन, गाजियाबाद, 2012, फ्लैप से।
20. https://www.rachanakar.org/2012/07/blog-post_05.html
21. https://www.navjivanindia.com/news/renowned-author-painter-and-narmada-lover-amrit-lal-vegad-passes-away
22. अमृतलाल वेगड़, चरैवेति, चरैवेति, सं. माधव हाड़ा, साहित्य अकादमी, नई दिल्ली, 2017, पृ. 79।
23. डॉ. नगेंद्र, सं. हिंदी साहित्य का इतिहास, मयूर पेपरबैक्स नोएडा, 2012, पृ. 826।

□□